राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

वर्ष 70 जनवरी–जून 2022 अंक 1

रामाश्रम सत्संग (रजि.), ग़ाज़ियाबाद

विषय सूची

क्रमांक		पृष्ठ
1.	सहजो बाई	1
2.	जाप का तरीका	2
3.	गुरु की आवश्यकता	7
4.	परमात्मा की अनुभूति बड़ी सरलता से हो सकती है	12
5.	फकीर हजरत इनायत शाह कादरी के अनमोल वचन	18
6.	परमसंत बुल्ले शाह के अनमोल वचन	18
7.	परमसंत बाबा फरीद के अनमोल वचन	19
8.	मीरा बाई	20
9.	स्वामी विवेकानंद जी के अनमोल वचन	20
10.	संत वचनामृत	21
11.	कार्यकारी समिति	22
12.	Do Your Duties in God's World	24
13.	Rumi: Whispers of the Beloved	26

ॐ

राम संदेश

वर्ष 70 | जनवरी-जून 2022 | अंक-1

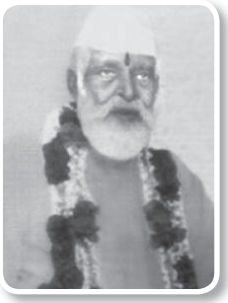

संस्थापक : ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज
संरक्षक : ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब
ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना जी
सम्पादक : श्री उमा कान्त प्रसाद (आचार्य एवं अध्यक्ष)

सहजो बाई

प्रेम दीवाने जो भए, मन भयो चकनाचूर। छकें रहैं घूमत रहैं, सहजो देखि हजूर।।
प्रेम लटक दुर्लभ महा, पावै गुरु के ध्यान। अजपा सुमिरण कह तहूं, उपजै केवल ज्ञान।।
सहजो संगति साधु की, छूटे सकल वियाध। दुर्मति पाप रहै नहीं, लागै रंग अगाध।।
जैसे संडसी लोह की, छिन पानी छिन आग। ऐसे दुख सुख जगत के, सहजो तू मत पाग।।
धन जोबन सुख संपदा, बाहर की सी छाहिं। सहजो आखिर धूप है, चौरासी के माहीं।।
सहजो गुरु दीपक दियो, रोम-रोम उजियार। तीन लोक दृष्टा भए, मिट्यो भरम अंधियार।।
सहजो गुरु दीपक दियो, नैना भए अनन्त। आदि अंत मध एक ही, सूझि पड़े भगवंत।।

परमसंत महात्मा रामचन्द्रजी महाराज

जाप का तरीका

जिक्र सिर में जाकिर को सिवाय हुजूर हक के और कोई हुजूर नहीं होता। मतलब इसका यह है कि जब दिल का जाप होता है, तब चाहे परमात्मा का खयाल रहे या दुनियाँ का या दुनियाँ की चीजों का, तबीयत लगी रहती है, यानी आवाज भी मालूम हो रही है और ईश्वर का ध्यान भी आ रहा है और कभी दुनियाँ की तरफ भी तबीयत मायल है, दोनों हालतों में शब्द मालूम होता रहता है। लेकिन जिक्र रूह के वक्त बमुकाबिले दुनियाँ और दुनियाँ की चीजों के ईश्वर का ख्याल ज्यादातर रहता है, दुनियाँ की तरफ कम रहता है। और जिक्र सिर के वक्त सिवाय ईश्वर के दुनियाँ की तरफ खयाल ही नहीं जाता है खाली ईश्वर का ध्यान बंधा रहता है।

1. लतीफा कल्ब बाँई पसली के नीचे की तरफ है जहाँ दिल धड़कता मालूम होता है।
2. लतीफा रूह दाहिनी पसली के नीचे है।
3. लतीफा सिर लतीफा कल्ब के जरा ऊपर की तरफ है।
4. लतीफा खफी लतीफा रूह के ऊपर की तरफ है।
5. लतीफा अखफी सिर और लतीफा खफी के ऊपर बीचों बीच में जहाँ पर हिल्की भर आया करती है। सूरत इसकी यह है:

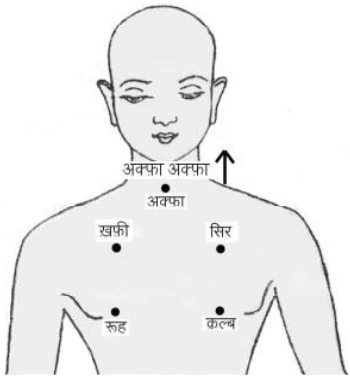

बाई तरफ दिल धड़कता है इस वजह से यहाँ धड़कन और आवाज ज्यादा मालूम होती है। दाहिनी तरफ ज्यादा साफ नहीं मालूम होती बल्कि खयाल सा आता है कि धड़कन होती है लेकिन इस कदर कमजोर कि मुश्किल से पता चलता है और बाज लोगों को पता नहीं भी चलता और लतीफा सिर में कभी कुछ मालूम होता है और कभी नहीं। और जिक्र खफ़ी यह है कि वजूद रूह में छिप जाता है जैसे मख्लूकात जिक्र सिर में छिप जाते हैं। जिस जाप की आवाज मालूम न हो उसको जिक्र खफ़ी कहते हैं अपने जिस्म की निगाह सुरत से हट जाती या जिक्र और शब्द का वजूद सुरत में समा जाता में है जिस तरह कि शब्द सुरत में समा जाता है। जिक्र और शब्द में भूल और गफलत नहीं होती और न नसियां होता है। तो खासकर यही एक सबसे अच्छा वसीला असल नतीजा के पाने का है ऐसे वसीले को पकड़ना सहीह इबादत और उपासना है। अब यह उपासना चाहे जिस्म हो या जिस्मानी हो, स्थूल हो या सूक्ष्म, नाम हो या नामी हो या उसके सिवा और कुछ न हो। मगर जिस वसीले से मकसूद को भूल जाए उसका वसीला पकड़ना और उसकी तरफ मुतवज्जह होना गुमराही और झूठ है चाहे वह कुछ भी हो। इसलिए सूफी के तमाम कर्म और वचन जिसमें याद और जागृति और ज्ञान पैदा हो जिक्र और जाप कहे जाते हैं। और जो ऐसे न हो वह जिक्र और जाप हरगिज नहीं हैं। बाज लोग यह कहते हैं कि जिक्र यानी जाप की बहुत सी किस्में हैं। जिक्र जुबान से जो किये जाते हैं वह हलके भी होता है और जोर से भी इसको जिक्र लिसानी (जुबानी) कहते हैं। यह जुबानी जिक्र और जाप कल्ब–रूह–सिर– खफ़ी–अखफ़ा और अखफ़ी अखफ़ा होते हैं यानी हर लतीफे पर किये जाते हैं और लफ्ज के साथ किए जाते हैं इसमें हरफों की सूरत इख्तियार की जाती है और यह भी होता है कि कभी एक हरफ को पहले बोलते और कभी उसी हरफ को बाद में शब्द में हरफों के बोलने के वक्त जो हरकत या ठहराव वगैरह होता है उसके कायदे बंधे हुए हैं। अगर हुए उन हरफों को आवाज से अदा करे और बोले तो ''झिहर'' कहलाते हैं। और बिना आवाज के बोले जो खुद ही सुन सके उनको ''खफी'' कहते हैं। यहाँ जो खफी का लफ्ज लाया गया है उसके मानी छुपे हुए हैं। लतीफे या मुकाम का नाम नहीं है जैसा कि ऊपर उसका जिक्र आया है।

जिक्र कल्ब और मानसिक जाप में शब्द की सूरत को बार–बार याद करना या उस नाम के नामी को दिल में अपने हाजिर और सामने रखना इस तरह पर कि हरफ

के आगे और पीछे का कुछ ख्याल न किया जाए बल्कि एक मर्तबा उस नाम के हरफों और हरकतों और ठहराव को दिल में हाजिर कर लेना है। जिक्र रूह में यह होता है कि उस नाम को भूल जाना होता है। जिसको कि जपता है और उस नाम के नामी को दिल में हाजिर व कायम कर लेना होता है। मसलन लफ्ज के हरूफ वगैरह जिन से कि वह नाम बना है याद नहीं रहते हैं बजाय उसके ईश्वर की याद बाकी रह जाती है।

चूँकि असल फितरत यानी प्रकृति सब की अलग–अलग होती है इसलिए जाप करने वालों की अलग–अलग खासियतों की वजह से जाप और जिक्र की भी जुदी–जुदी सूरतें होती हैं मस्लन बाजों को जिक्र कभी हो जाता है और अक्सर नहीं होता। बाजों को इसके बरअक्स होता है। बाजों को मरते दम तक नहीं होता लेकिन – आखिरी वक्त एक दम भभूका सा फूट निकलता है। अलबत्ता सब लोगों को मालूम रहता है कि हम जाकिर हैं। और जाप करते रहते हैं और यह भी जानते हैं कि हमारे और उसके दर्मियान जिसका हम ध्यान करते हैं जाप जरूर है। सबसे बढ़िया दर्जे का जाप यह है कि जाप और जाप करने वाले का नाम और निशान भी दर्मियान से उठ जावे और जिसका कि जाप किया जाता है वह ही सामने रहे और जाप करने का आनंद भी न रहे और आनन्द को भी न जाने जिक्र अखफा और अखफी अखफा में ऐसी हालत हो जाती है जो ऊपर बयान की गई है यानी आनन्द का और आनन्द के जानने का खयाल नहीं होता।

जिक्र अखफा उस जगह और मुकाम के नाम को कहते हैं जो नकशे में सबके ऊपर और बीचों बीच दिखलाया गया है और अखफी अखफा वह मुकाम है कि जो नुक्तये सुवेदा के मुकाम यानी दोनों भवों के दर्मियान है। कण्ठ यानी गले की जगह जो जिक्र होता है वह बहुत साफ और मजबूत और देर तक ठहरने वाला होता है मुमकिन है कि अकफी अखफा इसी को कहते हैं इस मुकाम की तफसील में जरा शक है दरियाफ्त तलब है।

हजरत शेख शरुद्दीन यहि मुनेरी रहमत उल्लाह फरमाते हैं कि जिक्र यानी जाप की चार सूरतें हैं:- अव्वल यह कि असलियत और गहराई और सत के भण्डार में जबान से जप होता है लेकिन दिल वहाँ नहीं पहुँचता और ग़ाफिल है– दूसरे जबान जाकिर है और दिल भी उसके साथ और मुवाफिक है लेकिन इतना है कि दिल

कभी-कभी सो जाता है मगर जबान का जाप नहीं जाता। तीसरे में जबान दिल से और दिल जबान के साथ और मुवाफिक होते हैं लेकिन कभी-कभी दोनों गाफिल हो जाते हैं; चौथे में यह होता है कि जुबान गाफिल और बेकार होती है मगर दिल जाकिर और हाजिर रहता है। यह बड़े दर्जा का जाप है। इस जगह बिल्कुल जरूरी काम हुजूर और आगाही का है।

''दिल का हर वक्त काम पर हाजिर रहना और यह मालूम होना कि काम जाप का हो रहा है हुजूरी कहलाता है।''

अर्थात् आगाही खबर और ज्ञान का नाम है। यही जिक्र और जाप की हकीकत है और जाप करने वाले को इस मुकाम में भी वह रुतबा हासिल हो जाता है कि अपने दिल की आवाज को सुनता है और जाप करने वाले के सिवाय कोई दूसरा उस आवाज को नहीं सुन सकता।

बाज लोग यह कहते हैं की अभ्यास शुरूअ करने वाले के लिए जिक्र और जाप मुफीद होता है दर्मियानी के लिए स्वाध्याय वगैरह और इन्तहा पर पहुँचे हुए के लिए नमाज संध्या वगैरह।

लेकिन मेरे नजदीक यह अच्छा है कि जिक्र खफी यानी दिल का जाप सिर्फ किया कर और नाजिन्स और गैर आदमी और गैर सोहबत के नकशों से दिल को साफ रखे और परमात्मा के सिवाय किसी की तरफ तवज्जुह न करे और एकाग्रता के साथ दिल हाजिर रखने की तरफ पक्का इरादा कर ले और सत और मालिक की तरफ उन्सियत और लगाव हसिल करना और अपने आप को मेट कर उसी में महब और लय हो जाना और इसी काम में अपने आप को मिटा देना सब में ज्यादा नजदीक रास्ता और असल पद तक पहुंचने का यकीनी जरिया है।

अब जिक्र के चन्द आदाब लिखे जाते हैं। आदाब वह बातें हैं जो आप करने में और उनके सहल बनाने में मददगार होती हैं। अगर यह बातें न बरती जावें तो कठिनाई होती है और अच्छी तरह काम नहीं बनता है। यह बातें बीस हैं जिन में से पांच ऐसी हैं जो जाप करने से पहिले की जाती हैं- बारह ऐसी हैं जिनका जाप शुरू कर देने के बाद ध्यान रखा जाता है और तीन जाप के बाद।

जाप और जिक्र शुरू करने से पहिले की यह बातें हैं :

1. तौबा या पश्चाताप करना कि अब तक जो कुछ किया सो किया अब आयन्दा

के लिए हमेशा के वास्ते वादा करता हूं कि अब ऐसी बातें कभी नहीं करूंगा जो धर्म के विरुद्ध अब तक की है।

2. दिल को मुतमैयन और शान्त रखना।
3. तहारत हासिल करना यानी शौच करना नहा–धोकर साफ कपड़े पहिनना और साफ जगह पर बैठना वगैरह।
4. अपने शेख यानी गुरु से मदद लेना।
5. यह बात जानना कि गुरुदेव से मदद लेना ऐसा ही है जैसा इष्टदेव से।

जाप और जिक्र के वक्त की शर्ते यह हैं:

1. आसन के साथ बैठना यह तबीयत की बात है कि दो जानू बैठे जैसे नमाज में बैठने हैं या किसी दूसरे आसन पर सबसे अच्छा सिद्ध आसन मालूम होता है और दोनों हाथ दोनों रानों पर रखना।
2. जगह जहाँ बैठना है उसको खुशबूदार करना धूप और लोबान वगैरह सुलगाकर या हवन करके और खुशबूदार ताजा फूल रखकर।
3. साफ कपड़े पहिनना और कोठरी को अंधेरा कर लेना।
4. दोनों आँखों और दोनों कानों के सुराख बन्द कर देना। (हमारे यहाँ अंधेरी कोठरी और कानों को बन्द करने की शर्त नहीं है)।
5. शेख या गुरु की सूरत को दिल में हाजिर रखना।
6. जाहिर बातिन सच्चाई और खलूस से सिर्फ कल्मा तौहीद को इख्तियार कर लेना।

(हमारे यहाँ जाप के वक्त इसकी जरूरत नहीं समझते सिर्फ शब्द सुनने पर ध्यान रखते हैं यह पुराने उसूल के मुताबिक बयान है)

यह शर्तें जो बयान की गई हैं कि गुरु की सूरत जहन में रखे और कल्मा तौहीद के मानी को जहन में रखे इस वजह से दाखिल की हैं हाजतों के पूरा करने में यह बहुत मदद देती हैं।

(परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज द्वारा लिखित पुस्तक ''कमाल इन्सानी'' से उद्धृत)

गुरुदेव परमसंत डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज

गुरु की आवश्यकता

कुछ लोगों का प्रश्न होता है कि कोई मनुष्य है तो सत्संगी, किन्तु बुरे अंगों में फंसा रहता है और दूसरा मनुष्य सत्संगी नहीं है, परन्तु अच्छा आचरण रखता है। दोनों में कौन अच्छा है? इसका उत्तर यह है कि वर्तमान अवस्था के अनुसार जो गैर सत्संगी है वही अच्छा है, किन्तु जाहिरी हालत पर भी खूब सोच समझ कर गौर करना चाहिए। हो सकता है कि सत्संगी के अन्दर से पिछले जन्मों के विकार दूर किये जा रहे हों। हो सकता है कि वह संस्कारवश ही ऐसा करता हो और सम्भल कर चलने का यत्न करता हो। ऐसा इन्सान तरक्की की तरफ जा रहा है। उसकी यह जाहिरा हालत अस्थाई है। पूरे गुरु की शरण मिल जाना कोई मामूली बात नहीं है और उससे प्रेम का रिश्ता जुड़ जाना और भी कठिन है। जिनके संस्कार अत्यंत उत्तम होते हैं उन्हें ही पूर्ण सतगुरु के दर्शन प्राप्त होते हैं। यह उनका महा सौभाग्य है। इसलिये अगर किसी सत्संगी में हजार अवगुण हैं और सिर्फ एक गुण यानी अपने गुरु से सच्चा प्रेम है तो वह उस गैर-सत्संगी से, जो चाहे कितना भी चरित्रवान और गुणवान हो, लाख गुना बढ़कर है। अकेला गुरु का प्रेम ही उसे सब आपदाओं से निकाल कर ले जायगा। उस प्रेम की आग ही कंचन को शुद्ध कर देगी। सारा मैल यानी बुरी बातें एवं संस्कार जलकर भस्म हो जायेंगे।

अगर उसमें जाहिरी कोई कसर नजर आती है जो पिछले संस्कारों की वजह से है तो आहिस्ता-आहिस्ता संस्कार पूरे हो जाने पर शान्त हो जायेगी । कबीर साहब कहते हैं :

कबीर मेरे साध की निन्दा करे न कोय ।
जोपं चन्द कलंक है तऊ उजियारा होय ।।

ऐसे मनुष्य की निन्दा नहीं करनी चाहिए क्योंकि वह सच्चा साधक है। गुरु की शरण में रहकर वह अपनी कमजोरियों को दूर कर रहा है। चन्द्रमा को हजार

दोषी ठहराव, लेकिन संसार को वह शीतलता प्रदान करता है। इसी प्रकार साधुजन (सच्चे साधक) अपनी कमजोरियों के होते हुए भी दूसरों के हितकारी होते हैं।

इसके विपरीत जो मनुष्य सत्संगी नहीं हैं परन्तु अच्छे अंगों में भाव रखते हैं तथा कार्य करते हैं, आगे चल कर जब बुरे संस्कार उभरेंगे, अपनी हालत को कायम न रख सकेंगे। चूंकि बेसहारे हैं (गुरु धारण नहीं किया) जब संस्कारों का वेग आयेगा, उसमें बहने लगेंगे, और राह से बे–राह हो जायेंगे। उनमें अहंकार और अभिमान पैदा होने का डर रहता है और जब तक सत्संग न करें उन्हें आगे का रास्ता नहीं दिखाई देता ।

कुछ लोग सत्संग में आकर ऐसे ऊटपटांग सवाल कर बैठते हैं, जिनसे न उनका भला होता है न किसी और का। जैसे, यह पूछना कि परमात्मा को किसने पैदा किया, मृत्यु कब होगी, इत्यादि। ऐसे प्रश्न अनुचित हैं। महापुरुषों का वचन है कि जब संसार का काम करें तो यह सोचकर कि हमको कभी मरना नहीं है और परमार्थ का काम यह सोचकर करना चाहिए कि मौत न मालूम कब आए। इसलिए मौत के लिए हर वक्त तैयार रहें और जो अवसर मिले उसे मालिक की बन्दगी में लगावें। यद्यपि संत अन्तर्यामी होते हैं, सब कुछ जानते हैं, तो भी, चूँकि मालिक की तरफ से यह इन्तज़ाम है कि मौत के दिन का पता मनुष्य को नहीं होने पावे, इसलिए वे परमात्मा की इच्छा तथा उसके रहस्य को खोल कर बता देना अनुचित तथा जीव के लिए अहितकर समझते हैं। इसलिए ऐसे व्यर्थ प्रश्न नहीं करने चाहिए।

कुछ लोगों का ख्याल है कि ईश्वर तो सबका है, वह 'सत्यम्, शिवम, सुन्दरम है, उसे पाने का हरेक को समान अधिकार है, फिर गुरु की क्या आवश्यकता है?

इसका उत्तर यही है कि यदि किसी जीव को गुरु के बिना ईश्वर प्राप्ति हो जाय और पता लग जाय कि सभी मनुष्य गुरु धारण किये बिना ईश्वर प्राप्ति समान रूप से कर सकते हैं, तो उसका ख्याल सही है। परन्तु जिसे ईश्वर प्राप्ति नहीं हुई है और वह खोजी है तो यह ख्याल उसके लिए नुकसान पहुँचाने वाला है। ऐसे लोग केवल बातें ही करते हैं, ईश्वर प्राप्ति का अनुभव नहीं व्यक्त करते,

क्योंकि ईश्वर प्राप्ति इन बातों से कोसों दूर है।

सच तो यह है कि अवतारी पुरुषों को छोड़कर हरेक को गुरु की आवश्यकता है। यद्यपि उन्हें जरूरत न थी लेकिन आदर्श कायम करने के लिए सभी अवतारी पुरुषों ने गुरु किया है। कृष्ण भगवान, रामचन्द्र जी महाराज आदि सबने गुरु धारण किया। क्या तुम उनसे भी बढ़ गये? जब संसारी विद्या यानी पढ़ाई-लिखाई गुरु की मदद के बिना नहीं प्राप्त होती तो ब्रह्म विद्या की प्राप्ति कैसे हो सकेगी? साधारण मनुष्यों के मन का बहाव दुनियाँ की तरफ होता है। ईश्वर-प्राप्ति के लिए अन्तर की चढ़ाई करनी होती है और मन को अंतर्मुखी बनाना पड़ता है। अगर किसी को अपने ऊपर बड़ा काबू है तो ज्यादा से ज्यादा वह अपने मन को शान्त बना सकता है। हालांकि यह काम बड़ा मुश्किल है और इसके करने में भी कई जन्म बीत सकते हैं लेकिन अगर ऐसा भी हो जाए तो मन शान्त हो जाने पर इन्सान को नींद या गफलत आ जाती है और मन फिर बेकाबू होकर बहिर्मुखी हो जाता है। इसलिए उसको अंतर्मुखी बनाने के लिए गुरु की बड़ी जरूरत है। वे अपनी मदद से उसके मन को आहिस्ता-आहिस्ता अंतर्मुखी बनाते जायेंगे और जैसे वैद्य रोगी को दवा और पथ्य देकर अच्छा कर देता है ऐसे ही साधक को उपदेश द्वारा सुगम राह बताकर गुरु ईश्वर प्राप्ति करा देते हैं।

यह सच है कि ईश्वर सबका है और उसे प्राप्त करने का सबको समान अधिकार है, लेकिन कोरे ख्याल से ही तो कुछ नहीं होता। सूर्य सबको प्रकाश देता है, लेकिन जिनकी आखें बन्द हैं, या अन्धे आदमी, चमगादड़, उल्लू, आदि उसके प्रकाश से कुछ लाभ नहीं उठा सकते। इसी तरह साधारण मनुष्य आंतरिक चक्षु खोले बिना ईश्वर का प्रकाश नहीं देख सकते। यह सब गुरु की सहायता के बिना कदापि नहीं हो सकता।

मनुष्य में एक विशेषता यह है कि ईश्वर की ओर से उसको इच्छा-शक्ति और शुद्ध बुद्धि दी गई है जिससे वह दुनियाँ का तजुर्बा कर सके और तजुर्बा करने के बाद जब उसकी असलियत को समझ जाय तो इच्छा शक्ति के द्वारा उससे अलहदा हो सके। लेकिन मनुष्य शुरू से ही निचली अवस्थाओं में फँस जाता है और दुनियाँ की चीजों को हासिल करने में लग जाता है जिससे उसकी बुद्धि

परमात्मा की ओर से हट कर दुनियाँ में फँस जाती है और उसको प्राप्त करने की कोशिश करती रहती है कि बुराइयों को जानते हुए भी और उनसे अपने आपको छुड़ाने की कोशिश करने पर भी सफल नहीं होता। ऐसी हालत में मन, जो सबसे बड़ा बैरी है, उसको शान्त करके आत्मा को उससे निकालना मुश्किल ही नहीं असम्भव है। जरूरत इस बात की है कि हम अपनी बुद्धि को शुद्ध करें, मन की खोई शक्ति को एकाग्र करें जिससे बुराइयों से अपने आपको निकाल सकें। यह तभी मुमकिन हो सकता है जब हम किसी महापुरुष का सत्संग करें, उससे प्रेम का नाता जोड़ें और उसका स्मरण करते रहें। ऐसे ही महापुरुष को, जिसके साथ हमारा इस प्रकार का व्यवहार हो, गुरु कहते हैं। इसलिए बिना उसकी सहायता के हम मन पर, जो दुनियाँ में हमारा सबसे बड़ा बैरी है, विजय नहीं पा सकते और अपना लक्ष्य, जो शान्ति और आनन्द की जिन्दगी है, प्राप्त नहीं कर सकते।

सत्संग में आकर पाँच बातें हर प्रेमी भाई को समझ लेनी चाहिये। पहली यह कि दुनियाँ की सब चीजें और अपना शरीर नश्वर है। केवल एक आत्मा ही ऐसी चीज है जिसका नाश नहीं होता। अगर हमारे शरीर में से वे सब चीजें हटा दी जायें जो नश्वर हैं तो अन्त में जो बचेगा वही एक रस कायम रहने वाला है। उसी को परमात्मा कहते हैं। वही हमारी जान व सुरत है। दूसरी यह कि इस आत्मा का भी एक असल भण्डार है जहाँ से यह आई है और वह कुल जिसका यह अंश है, सच्चा मालिक (अंशी) है जिसे लोग परमेश्वर, सच्चिदानन्द, अल्लाह और अगणित नामों से पुकारते हैं। तीसरी यह कि आत्मा का गुण पानी की बूंद की तरह है। जिस तरह हर कतरा यानी पानी की बूंद कुदरती तौर पर अपने असल भंडार, समुद्र, को वापिस जाना चाहती है वैसे ही आत्मा का प्रकृत प्रेम एवं लगाव, अपने असल भंडार, सच्चे मालिक, की तरफ है। चौथे यह कि जैसे आत्मा की चाह अपने असली भंडार में समा जाने की होती है वैसे ही उस सच्चे मालिक को भी यह ख्याल होता है कि समस्त आत्माएँ उसकी गोद में आ जायें। पाँचवीं यह कि उस सच्चे मालिक परमेश्वर की ओर से यह प्रबन्ध है कि समय–समय पर उसमें से रूहानी धारें प्रकट होकर पृथ्वी लोक पर उतरती हैं, सतगुरु–रूप धारण

करके जीवों को निज भण्डार में समा जाने की राह बतलाती हैं और जो आत्माएँ इच्छुक होती हैं, उन्हें अपने प्रीतम के मिलने में पूरी-पूरी सहायता करती हैं। कुछ को साथ ले जाती हैं और बाकियों के लिये बीज छोड़ जाती हैं ताकि वे भी उस राह पर चल कर अपने लक्ष्य को पूरा करें। इन्हीं को अवतार, सतगुरु, औलिया, इत्यादि नामों से पुकारते हैं। अगर किसी को भाग्य से ऐसे सद्गुरु मिल जायें तो उसे चाहिये कि उनकी शरण लेकर अपना काम बना ले।

कुछ स्त्रियाँ सत्संग में शामिल होने के बाद प्रार्थना करती हैं कि उनके पति भी सत्संग में शामिल हो जायें। उनकी यह प्रार्थना अनुचित नहीं हैं, परन्तु उनके लिये यह अच्छा है कि अपने पति के साथ ऐसा व्यवहार करें जिससे उसे विश्वास हो जाय कि सद्गुरु की शरण में जाने से उसका मन निर्मल हो रहा है। जब उसको इस तरह का विश्वास हो जायेगा तो अवश्य उसको सन्तमत की शिक्षा जानने की उत्सुकता पैदा होगी और यह इच्छा पूर्ण करने के लिये या तो वह सन्त-मत की किताबें पढ़ेगा या सत्संग में आकर वचन सुनेगा जिससे सन्त-मत के आचार्यों पर उसका विश्वास पक्का हो जायेगा। इस पर अमल करने से स्त्रियों की इच्छा (सत्संग में अपने पतियों को शामिल करने की इच्छा) पूरी होगी तथा उनके घर में सुख-शान्ति बढ़ती जायेगी और दोनों के स्वभाव में सुखदायक परिवर्तन होता जायेगा। किसी सम्बन्धी को जबरदस्ती सत्संगी बनाने की चाह उठाना ठीक नहीं है। परमार्थ के विषय में हरेक को अपनी-अपनी स्वतन्त्रता है। इंगलैंड तथा अन्य ईसाई पश्चिमी देशों में अगर पति कैथोलिक है तो पत्नी प्रोटेस्टेन्ट है। इसके अलावा सभी जीव परमात्मा की संतान हैं और वह सबका भला चाहता है। उसको हमारे मुकाबले में अपनी सन्तान की ज्यादा चिन्ता है। हम केवल मोह-वश उनकी उन्नति चाहते हैं और मालिक स्वभाव-वश उनकी उन्नति की चिन्ता रखता है।

(संत वचन-भाग 1 से उद्धृत)

प्रवचन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब

परमात्मा की अनुभूति बड़ी सरलता से हो सकती है

परमपिता परमात्मा सर्वव्यापक है। वह कण–कण में है, पत्ते–पत्ते, डाली डाली में है। हम सब एकत्र हुए हैं परमपिता परमात्मा की अनुभूति के लिए। सर्वव्यापकता का अर्थ है कि परमात्मा हमारे भीतर में भी है। फिर हमें उसकी अनुभूति क्यों नहीं होती? इस सम्बन्ध में मैंने प्रातः निवेदन किया था कि हमारा मन संकल्प–विकल्प उठाता रहता है। जितना हम अधिक बोलते हैं, जितना हम अधिक शब्दों का प्रयोग करते हैं, उतना ही हम देखते हैं कि प्रभु हमसे कहीं दूर हैं।

परमात्मा की कृपा प्रत्येक वस्तु पर, प्रत्येक व्यक्ति पर एक जैसी हो रही है। यह अवसर है कि हम परमपिता परमात्मा की उस कृपा वृष्टि का अनुभव करें। उस वृष्टि को सूफियों में 'फैज' कहते हैं। संतों ने उसे 'अमृत' कहा है। अरविन्द जी ने इसे 'भगवत प्रसादी' कहा है। इस प्रसादी की अनुभूति हमें क्यों नहीं होती?

परमात्मा का न आदि है न अन्त है। उसका रूप क्या है? पुष्प में जो सुगन्धी होती है, वह दीखती नहीं है परन्तु होती है। इसी प्रकार परमात्मा भी उस सुगन्धि की तरह प्रत्येक कण–कण में बसे हैं। उसका रूप शास्त्रों में, महापुरुषों ने, ऋषियों ने केवल एक ही शब्द में कहा है 'ओम' या 'ओंकार'। अंग्रेजी में कहते हैं 'पे' यानी 'है'। परमात्मा है। इस पे को ही मनुष्य रूप देने की कोशिश करता आया है। इसीलिये हमारे देश में तथा अन्य देशों में भी मनुष्यों ने परमात्मा के विभिन्न रूप बना लिए हैं और हम उन रूपों की पूजा करते हैं।

स्वामी रामतीर्थ जी ने कहा है कि यह मन की पूजा है। मन जो विचार बना लेता है, जो धारणा बना लेता है, जो ध्यान बना लेता है, वह उसी की पूजा करता है। यह गलत नहीं है। भक्ति के उपासक कुछ न कुछ रूप बना लेते हैं। प्रेम व भक्ति से उसके गुण सराहते हैं। किसी रूप की पूजा करना या न करना, यह तर्क का विषय

नहीं है। सभी ठीक हैं। सगुण की पूजा करके भी भक्तों ने भगवान के दर्शन किए हैं। सभी ठीक हैं। कोई गलत नहीं हैं। गलत हमारा मन है। इस मन को शान्त कर दो। जब तक यह मन शान्त नहीं होता तब तक प्रभु के निर्गुण, निराकार स्वरूप की अनुभूति नहीं कर सकता। अनुभूति तो तब हो जब परमात्मा कहीं दूर हो। परमात्मा तो आप में ही है। केवल इस मन को पास लाना है। कबीर साहब फरमाते हैं –

'जब तक मैं था हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
प्रेम गली अति सांकरी या में दो न समाहिं।।'

ईश्वर का दूसरा नाम है 'प्रेम'। उसमें दूरी नहीं है, दूसरापन नहीं है। यह मन दूसरापन खड़ा कर देता है और यह मन ही जब तक शांत नहीं होता तब तक प्रभु की प्रेम गंगा, कृपा वृष्टि में बाधा डालता है। उस गंगा प्रवाह की अनुभूति नहीं होने देता। उस अनुभूति का कोई वर्णन नहीं कर सकता। परमात्मा का क्या वर्णन करें? हजारों पुस्तकों में परमात्मा का वर्णन करने का प्रयास किया गया है, परन्तु सब अधूरे हैं। महापुरुषों ने केवल एक ही शब्द में वर्णन किया है। इसी को हम 'शब्द' कहते हैं, सत–चित–आनन्द कहते हैं, जिसका कभी विनाश नहीं होता।

मनुष्य को परमात्मा ने अपने जैसा बनाया, उसको चेतना दी है, शुद्ध बुद्धि दी है। परन्तु तब भी यह परमात्मा की अनुभूति नहीं कर पाता। परमात्मा की कृपा वृष्टि, जो सब पर एक जैसी हो रही है, मनुष्य उसे भी ग्रहण नहीं कर पाता। मनुष्य को परमात्मा ने ग्रहण शक्ति का विशेष गुण दिया हैं जिसका प्रयोग वह अपने मन के द्वारा करता है। किन्तु हमारा मन भीतर में रुकावट डाल देता है जिसके कारण हम ईश्वर की अनुभूति नहीं कर पाते, ईश्वर के साथ तदरूप नहीं हो सकते। परमात्मा की जितनी भी जगहें – मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा हैं, वहाँ सब जगह – उसकी कृपा एक जैसी पड़ रही है। मनुष्य ने ही अपने मन की दीवारें बना रखी हैं। हमारा यह मन ही हमें उस दया की फुहारों में स्नान नहीं करने देता। गुरुमुख रहता हुआ भी अछूता रहता है। आखिर मनुष्य क्या करे? बड़ा सरल तरीका है, सीधा रास्ता है। परमात्मा है, अवश्य है और उसकी अनुभूति हो सकती है। प्रत्येक व्यक्ति, बच्चे से लेकर बूढ़े तक, सब कर सकते हैं। केवल अपने हृदय की खिड़की को खोल देना है। मकान की खिड़की बंद कर देते हैं तो सूर्यदेव का प्रकाश अन्दर नहीं आता। उस सूर्य में तो

तेज है पर घर की खिड़कियां खुलने पर ही प्रकाश अन्दर आएगा। इसी तरह परमात्मा की अनुभूति के लिए केवल हृदय की खिड़की को खोलना है अर्थात् समर्पण भाव से बैठना है, सरलता से बैठना है। किसी प्रकार की खोज नहीं करनी। जितनी इसमें हम खोज करते हैं उतने ही हम दूर होते जाते हैं।

जड़ समाधि नहीं बननी चाहिये। मैनें कई लोग देखे हैं जो दो–दो घंटे साधना करते हैं। उनमें तदरूपता भी आती है। परन्तु वे एक गलती कर जाते हैं। प्रभु के रूप का तो ख्याल कर लिया परन्तु उसके गुण क्या–क्या हैं, प्रभु का स्वभाव, प्रभु का विरद क्या है, इस पर मनन नहीं करते। समाधि में इसका मनन जरूर करना चाहिये। इसके अभाव में जो समाधि होगी वह जड़ समाधि होगी। हमें चेतना समाधि का अनुभव करना है जिसमें ईश्वर के गुण हों। जो ईश्वर के गुण हों वो हमारे अन्दर भी विकसित होने चाहिये और वो गुण हमारे विचारों और हमारे व्यवहार द्वारा भी प्रगट होने चाहिये।

वास्तव में मनुष्य और परमात्मा में कोई अन्तर नहीं है। परमात्मा के गुणों का विकास निरन्तर होता रहता है। इसी तरह मनुष्य को भी अपने गुणों का निरन्तर विकास करना है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह प्रभु से बहुत दूर है। प्रभु के गुण क्या हैं? वह सत–चित–आनन्द है। आत्मा निरन्तर है, वह हमेशा एक सी है। उसका कभी विनाश नहीं होता। उसमें कभी परिवर्तन नहीं आता। उसका कोई जन्म नहीं, उसकी कभी मृत्यु नहीं। वह सत्य स्वरूप है। सत्य स्वरूप क्या है? सत्य की अनुभूति ज्ञान नहीं है, यानी ज्ञान की शिखरता, उच्चता। पुस्तक का पढ़ लेना ज्ञान नहीं है। शास्त्र इसको अज्ञान समझते हैं। ज्ञान केवल आत्मा या परमात्मा का ज्ञान है। इनकी अनुभूति ज्ञान है। उस सत्यता की अनुभूति निरन्तर होनी चाहिये। उस अनुभूति में विशेषता क्या है? आनन्द, आनन्द, आनन्द । निरन्तर एक तरह का प्रवाह बहता है। उतार–चढ़ाव नहीं है। इसीलिये इसमें आनन्द है। जहाँ उतार–चढ़ाव है, उसमें सु:ख भी है, दु:ख भी है। परन्तु आनन्द सु:ख व दु:ख से ऊपर है। आनन्द को महापुरुषों ने वर्णन करने की कोशिश की है। परन्तु बिना अनुभूति के वर्णन किया हुआ आनन्द तो अधूरा है।

मनुष्य को यहाँ परमात्मा ने इसलिए भेजा है कि उसका जो वास्तविक रूप–स्वरूप है उसकी वह अनुभूति करे। मनुष्य परमात्मा का लाड़ला बेटा है। परन्तु इसने 'रामराज'

को छोड़कर 'रागराज' बना लिया है। इसके भीतर में अहंकार ने अपना ही साम्राज्य खड़ा कर लिया है। परिवार में, समाज में, देश में जितने भी लड़ाई-झगड़े हैं, ये सब मन के बनाये हुए हैं। परमात्मा के प्रति मन में विश्वास नहीं है। इसलिए मनुष्य दु:खी है। दु:ख का कर्ता कौन हैं? परमात्मा या मनुष्य स्वयँ? परमात्मा का कोई दोष नहीं है। वह हमें प्रकाश दे रहा है, शक्ति दे रहा है, हमारा मार्गदर्शन कर रहा है। परन्तु हमने अपनी अलग सल्तनत खड़ी कर रखी है। हम अहंकार को छोड़ते ही नहीं। आवश्यकता है 'अहँ' को हराने की। अहँकार के अनेकों रूप हैं। यह शरीर, इसके भीतर जो चार और शरीर हैं, हमारा मन, ये सब अहँकार के प्रतीक हैं। जहाँ 'मेरे-तेरे पन' की आवाज होती है वहाँ अहंकार है। इस 'मैं' को खत्म करना है। हमें अपने अहंकार को या हमारा मन जिस जगह फँसा हुआ है उसे वहाँ से हटाकर ईश्वर के चरणों में लगाना है।

अब मनुष्य बेचारा क्या करे? मन अहँकार में, विषय भोगों में मस्त है जिनसे उपराम होना कोई साधारण बात नहीं है। हम जब तक इंद्रियों के विषयों से स्वतंत्र नहीं होते, मन में सँस्कारों की जो मलीनता है, उससे तृप्त नहीं होते, तब तक मन स्थिर नहीं होगा। मन धीरे-धीरे स्थिर हो जाता है, प्रयास करना चाहिये। एक समय ऐसा आयेगा कि हम भी प्रभु के प्रेम के अधिकारी हो जायेंगे। हमारी आत्मा भी परमात्मा से लौ लगा पायेगी।

संक्षेप में पुन: निवेदन करता हूँ कि परमात्मा की अनुभूति करने के लिए कोई विशेष तप करने की जरूरत नहीं है। संतों ने इसको बड़ा सरल बना दिया है। यदि गुरु पूर्ण है, उसकी आत्मा पूर्णतया परमात्मा में तदरूप रहती है। ऐसे व्यक्ति को हम 'संत' कहते हैं। ऐसे व्यक्ति के पास बैठने से हमारा भी चित्त निर्मल हो जाता है। हमारे भीतर की शक्ति उभर आती है और हमारे भीतर में उमंग जागती है कि हम भी परमात्मा के दर्शन करें। यदि हम ऐसे महापुरुष की सेवा में जाते रहें, उनके पास बैठते रहें तो हम भी उन महापुरुष जैसे बन सकते हैं। ऐसे संत या गुरु मिल जाएँ तो उनसे दीक्षा में जो नाम मिलता है उसको संत 'सतनाम' कहते हैं। सब नामों का सार परमात्मा के सत्तरूप का है व वही नाम है।

परन्तु मन इतना ढीठ है कि यदि सच्चा गुरु उसको मिल भी जाये तो भी उसकी अनुभूति उसको नहीं होती। वो संत की पहचान नहीं कर पाता। हमारे गुरुदेव कहा करते थे कि ऐसे सच्चे गुरु कोई हजार बरस में एक–दो आते हैं। तब भी उस स्तर के गुरु न मिलें, उससे कम मिल जाते हैं। हमारे देश की धारती को प्रभु का वरदान है कि यहां सन्तो की कमी नहीं। तो जिन्होंने कुछ प्रसादी प्राप्त की है ऐसे महापुरुषों की सेवा में रहकर, उनकी संगत में बैठकर उनके सत्संग द्वारा उनकी कृपा प्रसादी लेकर हम अपना उद्धार करें।

सूरज की किरणें सब पर पड़ रही हैं परन्तु यदि काला कपड़ा आतिशी शीशे के नीचे हो तो सूर्य की किरणें उस आतिशी शीशे पर अधिक शक्ति से पड़ेंगी और उस काले कपड़े को जला देंगी। यही स्थिति संत की होती है। परमपिता परमात्मा की शक्ति उस संवेदनशील संत के शरीर से होकर और अधिक शक्तिशाली हो जाती हैं। ऐसे संत के पास जो भी व्यक्ति आता है चाहे वह कितना भी पापी, गुनहगार क्यों न हो, और वह संत से सम्पर्क रखता है तो उसके पाप भी धुल जायेंगे।

संत जो भी उपदेश देते हैं वे हमारा जीवन सफल बनाने के लिए होते हैं। हमें उनके आदेशों का पालन फौरन बिना किसी सोच–विचार के करना चाहिये। जो गंभीर जिज्ञासु होते हैं वे अपना जीवन गुरु की आज्ञा पालन में लगाए रखते हैं जिसका उनको पूरा लाभ मिलता है। संत के भीतर से पवित्र किरणें निकलती हैं। जो व्यक्ति उनके सम्पर्क में आते हैं उनका उद्धार हो जाता है। इसलिए संतों के सत्संग का महत्व है। सत्संग में अपने हृदय की खिड़की खोल कर बैठना चाहिये। अपना कोई निजी अभ्यास नहीं करना चाहिये। परमात्मा के जिस रूप को आप मानते हैं उस रूप को सामने रख कर बैठना चाहिये। ख्याल करें कि उसी स्वरूप से 'कृपा' की किरणें आपके शरीर में, आपके मस्तिष्क में प्रवेश कर रही हैं।

परमात्मा के अनेकों गुण हैं। परमात्मा प्रेम स्वरूप है। प्रेम में क्या होता है? द्वेष नहीं, द्वन्द नहीं, अतीत नहीं, बुराई नहीं, भलाई नहीं। मुख्य गुण है कि दूसरे को अप्रयास ही सु:ख पहुँचाया जाये। हम साधना भले ही करते हैं परन्तु दूसरे को दु:ख पहुंचाकर हमें खुशी होती है। तो ईश्वर का अनुभव हमें कैसे होगा? ईश्वर के पास जो कुछ है वह कहता है कि ये सब कुछ तेरा है। हजरत ईसा लिखते हैं कि परमात्मा मुझ

से कहते हैं– 'ऐ बेटे! यह संसार, इसकी तमाम वस्तुएँ और शक्तियाँ मेरी हैं, वे मुझसे ले ले, ये तेरी ही हैं। तू क्यों तड़पता है? मैं साये की तरह प्रतिक्षण तेरे साथ हूं। तभी हजरत ईसा कहते हैं कि 'I and my father are one' (मैं और मेरे पिता (परमात्मा) एक हैं)। वह दीनता और सरलता के साथ कहते हैं 'I am his son' (मैं उनका पुत्र हूँ)। उन्होंने परमात्मा का पुत्र बनकर भक्ति की।

हमारे यहाँ नौ प्रकार की भक्ति बताई गई है। पुत्र बनकर भक्ति करना ऊँची भक्ति है। ईश्वर में लय होकर भक्ति करना श्रेष्ठ भक्ति है। ईश्वर में लय नहीं हुए तो वह भक्ति साधारण भक्ति है। सफी लोग लय अवस्था, तदरूप अवस्था को कहते हैं। 'मैं वही हूँ'। 'अहं ब्रह्मास्मि'। आगे और चरण है। 'मैं उसी से हूँ। मैं उसी का पुत्र हूँ, मैं उसी का दास हूँ। यह सरलतम भक्ति है। हमारे यहाँ इसको कान्ता भाव भी कहते हैं। राधा जी भगवान में लय हो जाती हैं, कृष्ण रूप हो जाती हैं। राधा जी से कृष्ण भगवान का अनन्य भाव है। परन्तु यह भाव समझ में तब तक नहीं आ सकता जब तक हम तदरूप न हो जायें।

तो मेरे कहने का मतलब यह था कि 'परमात्मा है' और उसकी अनुभूति बड़ी सरलता से हो सकती हैं।

गुरूदेव आप सबका कल्याण करें।

(संत प्रसादी – भाग 13 से उद्धृत)

फकीर हजरत इनायत शाह कादरी के अनमोल वचन

''बुल्लिहआ रब दा की पौणा।
एधरों पुटणा ते ओधर लाउणा''

मन को संसार की तरफ से हटाकर परमात्मा की ओर मोड़ देने से रब मिल जाता है।

●●●

परमसंत बुल्ले शाह के अनमोल वचन

उस दा मुख इक जोत है, घुंघट है संसार।
घुंघट में ओह छुप्प गया, मुख पर आंचल डार।।

उन को मुख दिखलाए हैं, जिन से उस की प्रीत।
उनको ही मिलता है वोह, जो उस के हैं मीत।।

बुल्लया अच्छे दिन तो पिच्छे गए, जब हर से किया न हेत।
अब पछतावा क्या करे, जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत।।

बुल्लया जैसी सूरत ऐन दी, तैसी गैन पछान।
इक नुकते दा फेर है, भुल्ला फिरे जहान।।

आयो फकीरो मेले चलिए, आरफ दा सुन वाजा रे।
अनहद सबद सुनो बहु रंगी, तजीए भेख प्याजा रे।

अनहद बाजा सरब मिलापी, निरवैरी सिरनाजा रे।
मेले बाझों मेला औतर, रुढ़ ग्या मूल व्याजा रे।

कठिन फकीरी रसता आशक, कायम करो मन बाजा रे।
बन्दा रब्ब ब्रिहों इक मगर सुख, बुल्हा पड़ जहान बराजा रे।

●●●

परमसंत बाबा फरीद के अनमोल वचन

फरीदा खाकु न निंदीऐ, खाकू जेडु न कोइ।
जीवदिआ पैरा तलै, मुइआ उपरि होइ।

बाबा फरीद कहते हैं कि मिट्टी खाक की बुराई कदापि न करें, क्योंकि उसके जैसा और कोई नहीं है। जब तक आप जिंदा रहते हो वह आपके पैरों तले होती है किंतु मृत्यु होने पर मिटी तले दब जाते हो। अर्थात् तुच्छ समझे जाने वाली वस्तुओं की निंदा नहीं करनी चाहिए क्योंकि समय बदलते देर नहीं लगती।

फरीदा जो तै मारे मुक्किया तिन्ना न मारे घुम्म।
आपनड़े घर जाइए पैर तिनह दे चुम्म।

फरीद कहते हैं जो तुम्हें मुक्के मारें अर्थात् दुख दें तुम पलट कर उन्हें दुख न दो (यानि बदले कि भावना न रखो) तुम दुख देने वाले लोगों के पांव चूम कर अपने निज स्वरूप में टिक जाओ (ऐसा करने से तुम्हारा मन शांत रहेगा)।

फरीदा जिन लोइन जग मोहिया सो लोइन मे डिठु।
कजल रेख न सहदिया से पंखी सूई बहिठ।

फरीद कहते हैं जिन खूबसूरत आँखों ने संसार के जीवों को मोह रखा था, मैंने वो आँखें भी देखी हैं। किसी समय ये आँखें काजल कि धार भी सहन नहीं कर पाती थीं, आज यह पक्षियों के बच्चों का घोंसला बनी हुई हैं। अर्थात् शारीरिक सुंदरता सदा एक सी नहीं रहती इसका अभिमान करना व्यर्थ है।

●●●

मीरा बाई

स्याम म्हाने चाकर राखो जी,
गिरधरी लाला म्हाँने चाकर राखोजी ।

चाकर रहस्यूँ बाग लगास्यूँ नित उठ दरसण पास्यूँ ।
बिन्दरावन री कुंज गली में, गोविन्द लीला गास्यूँ ।

चाकरी में दरसण पास्यूँ, सुमरण पास्यूँ खरची ।
भाव भगती जागीरी पास्यूँ, तीनूं बाताँ सरसी ।

मोर मुगट पीताम्बर सौहे, गल वैजन्ती माला ।
बिन्दरावन में धेनु चरावे, मोहन मुरली वाला ।

ऊँचा ऊँचा महल बणावं बिच बिच राखूँ बारी ।
साँवरिया रा दरसण पास्यूँ, पहर कुसुम्बी साड़ी ।

आधी रात प्रभु दरसण, दीज्यो जमनाजी रे तीरां ।
मीराँ रा प्रभु गिरधर नागर, हिवड़ो घणो अधीराँ ।।

●●●

स्वामी विवेकानंद जी के अनमोल वचन

कामनाएँ समुद्र की भाँति अतृप्त हैं। पूर्ति का प्रयास करने पर उनका कोलाहल और बढ़ता है।

उठो जागो और लक्ष्य तक मत रुको।

हम भगवान को खोजने के लिए कहां जा सकते हैं अगर हम उसे अपने दिल में और हर जीव में नहीं देख सकते हैं।

बस वही जीते हैं, जो दूसरों के लिए जीते हैं।

सबसे बड़ा पाप यह सोचना है कि आप कमजोर हैं। सारी शक्ति आपके भीतर है आप कुछ भी और सब कुछ कर सकते हैं।

●●●

संत वचनामृत

सारा जगत स्वतंत्रता के लिए लालायित रहता है फिर भी प्रत्येक जीव अपने बंध नो को प्यार करता है।

– *महर्षि अरविंद*

विश्वास वह पक्षी है जो प्रभात के पूर्व अंधकार में ही प्रकाश का अनुभव करता है और गाने लगता है।

– *रवींद्रनाथ ठाकुर*

हजार योद्धाओं पर विजय पाना आसान है, लेकिन जो अपने ऊपर विजय पाता है वही सच्चा विजयी है।

– *गौतम बुद्ध*

ज्ञानी लोगों के सानिध्य में बैठने पर भी मूर्ख लोग उनमें गलतियां ही ढूंढते रहते हैं।

– *ज्ञानेश्वर*

अपने विचारों को आवारा कुत्तों की तरह अचिन्त्य चिंतन में भटकने न दिया जाए।

–*ज्ञानेश्वर*

वह मन जो स्थिर है, उसके प्रति पूर्ण ब्रह्माण्ड समर्पित हो जाता है।

– *लाओत्से*

जब मैं उसे जाने देता हूँ जो मैं हूँ, मैं वो बन जाता हूँ जो मैं हो सकता हूँ।

– *लाओत्से*

जिस दिन हमारा मन परमात्मा को याद करने, और उसमे दिलचस्पी लेना शुरू कर देता है उसी दिन से हमारी परेशानियाँ भी हम में दिलचस्पी लेना बंद कर देती हैं।

– *गुरु रामदास*

रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद

रजिस्टर्ड ऑफिस: एस इ 297, शास्त्री नगर, हापुड़ रोड, गाजियाबाद, उत्तरप्रदेश

उमाकान्त प्रसाद
आचार्य एवं अध्यक्ष

207, संयम प्रतीक अपार्टमेंट
खाजपुरा, पटना–800014

घोषणा: संस्था की कार्यकारणी समिति 2021–2022

मैं, उमाकान्त प्रसाद, पुत्र स्व. श्री चंद्रिका प्रसाद, आचार्य एवं अध्यक्ष रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद (उ. प्र.) संस्था की वर्तमान कार्यकारणी समिति भंग करता हूँ। वर्ष 2021–2022 के लिए संस्था के विधान की धारा 10(ग) में प्रदत अधिकारों के तहत नवीन कार्यकारणी समिति का गठन करता हूँ तथा नवीन कार्यकारणी समिति में निम्न पदाधिकारियों एवं सदस्यों की नियुक्ति की घोषणा करता हूँ तथा नयी सूची जारी करता हूँ , जो विधान की धारा के अनुसार एक वर्ष की अवधि हेतु वैद्य एवं प्रभावी होगी :–

क्र.	पद	नाम	पता	व्यवसाय
1.	अध्यक्ष	श्री उमाकान्त प्रसाद	207, संयम प्रतीक अपार्टमेंट, खाजपुरा, पटना–800014	सेवानिवृत्त
2.	उपाध्यक्ष	कैप्टन के.सी. खन्ना	आर–11/182,न्यू राज नगर, गाज़ियाबाद	सेवानिवृत्त
3.	मंत्री	श्री अनुराग चन्द्र प्रसाद	बी1–206, अरावली, सैक्टर 34, नोयडा	सर्विस
4.	कोषाध्यक्ष	श्री राकेश वर्मा	ए–1701 एपेक्स एकेसिया वैली, सेक्टर–3, वैशाली, गाज़ियाबाद	सेवानिवृत्त
5.	सदस्य	श्री प्रियासरन	105 –हिमालय टॉवर, अहिंसा रवण्ड–2, इन्द्रापुरम, गाज़ियाबाद	सेवानिवृत्त

क्र.	पद	नाम	पता	व्यवसाय
6.	सदस्य	डॉ. मुद्रिका प्रसाद	सकेतपुरी, मुजफ्फ़रपुर, बिहार	सेवानिवृत्त
7.	सदस्य	श्री. आर.पी शिरोमणी	मूलचन्द मार्किट, शमशाबाद रोड, आगरा	सेवानिवृत्त
8.	सदस्य	प्रो. आदर्श किशोर सक्सेना	5, नेहरू कॉलोनी गांधीरोड, आर.के. पुरी ग्वालियर- 474011	सेवानिवृत्त
9.	सदस्य	प्रो. आर.के. सक्सेना	टी 2, 1501 हारमनी अपार्टमेंट सेक्टर 50, गुरुग्राम	सेवानिवृत्त
10.	सदस्य	श्री अजय बहादुर सिंह	प्लाट नम्बर-854, फ्लैट नम्बर-401/402, सुरेन्द्र अपार्टमेंट, मधुसूदननगर भुवनेश्वर, ओड़िशा	शिक्षा संस्थान
11.	सदस्य	श्री आशुतोष झा	402/सी, श्री गणेश अपार्टमेंट अशोक विहार, रांची	शिक्षा संस्थान
12.	सदस्य	ब्रजेश कुमार श्रीवास्तव	इ-19, स्ट्रीट F-1, पांडव नगर (मयूर विहार फेज-1 साइड) दिल्ली-110091	लीगल फर्म
13.	सदस्य	श्री राकेश कुमार	नन्दभवन, गाँधीपथ, गौड़िया मठजक्कनपुर, पटना	सर्विस
14.	सदस्य	श्री संजीव कुमार सिन्हा	हाउस नंबर- 16 चेतना समिति, ए जी कलोनी के समीप, पटना	सर्विस

(Sd)
उमाकान्त प्रसाद
अध्यक्ष एवं आचार्य
रामाश्रम सत्संग (रजिस्टर्ड) ग़ाजियाबाद

दिनांक 9-10-2021

Do Your Duties in God's World

To a man, whose power of judgment and reasoning is not sufficiently developed, this question may arise, if everything in the world is divinely arranged, if all the phenomena of all time and places in the universe occur in accordance with the cosmic play of God, why should a man work, why should a man have any enthusiasm to exert himself for doing anything?

If a man knows or sincerely believes that all things are being done by God in a sportive spirit, he would naturally feel that he has really nothing to do; he would have no ground to take life and its duties seriously; he would rather feel inclined to look on as an disinterested spectator and lazily enjoy, if possible what is playfully done by God. This is certainly not the way in which a truly enlightened person who sees the Divine play in the cosmic system, thinks and behaves. One who raises the question does not even fully understand the implication of the question itself.

Does not this itself imply that a man has a freedom to work or not to work, that he has the option to be an active worker or passive onlooker? Moreover, the questioner seems to forget that to refrain from doing work, a person does not require less determination and effort than for doing work.

To be a disinterested witness to the various forms of Divine sports in the world is not a very easy thing; it requires a great systematic training of mind and senses and nerves; it requires a good deal of control over desires and feelings and impulses. This also is a form of activity.

Whether a man will devote himself to active service in the external world or to the practice of acesticism or meditation, whether he will exert himself to move forward or to wait and see, this is a matter of choice between different kind of activities. Somehow, work he must and this is the plan of the Divine play.

Why should a man work in God's world? The Divine reply to this question is simple enough. Because this is his nature (*Swabhava*). Man has emerged with an active self-concious and self-determining nature in this cosmic play of the Absolute Spirit. The supreme art of the Divine sport is manifested in the human life in the form of free, voluntary puposeful activity. It is the very nature of man to work, to work with

deliberation and choice, with some purpose in view, with somwe ideal to be realized, with some sense of freedom and self-confidence.

Man is born as a man in this spiritual order of the universe to paly a distinctive part in it. It is this magnificent cosmic play of God, countless species of finite beings have evolved with distinctive characters and capabilities and tendencies to give expression to diverse aspects of the infinitely glorious nature of the Sportive Absolute and to play their allotted parts. The human species has a unique play in the system and has a unique role to play.

Man appears to be a self-governing, free, voluntary partner in this Divine play. The creative art involved in the Divine play seems to have most magnificiently displayed itself in the creation of the human nature. It is this human nature, which is ultimately the glorious form of manifestation of the Divine Nature, that is at the source of the active life of man.

Shri Krishna (in Srimadbhagvad Gita) says in clear terms – "Nobody can live for a single moment without doing any work. Everybody is made to work by the impulses of the Nature." He further says, "A man does not attain the state of actionlessness (*Nishkarma*) by merely refraining from doing external works. Nor does he attain Sanadhi (the state of perfect absorption with the Absolute Spirit) by merely renouncing connections with the external affairs of the world". "Every man", says He "is bound by his own Karma which is born of his nature (*Swabhava*), if any body wishes to do his allotted work from a sense of duty on account his want of right judgement, he will have to do it under pressure of circumstances".

Hence, a man with sound judgment, who has a proper estimate of his own nature and his allotted place and function in this cosmic play of the Supreme Spirit, never thinks of evading his duties, never thinks of living an idle life, never loses enthusiasm in the performance of his works which are in his view divinely allotted to him, never wishes to deprive himself of the serene joy of voulantarily and intelligently participating in the Divine play with a sense of freedom and love.It is his privilege as a man to do, freely and conciouslyand with love and admiration and reverence for the Divine Player, what he would otherwise be compelled to do slavishly under the pressure of the forces of the world.

– (Extracts from "Discourses on Hindu Spiritual Culture" by His Holiness Shri A.K. Banerjee published by S. Chand & Co.)

Rumi: Whispers of the Beloved

Dear heart, where do you find the courage to seek the Beloved when you know He has annihilated so many like you before?

I do not care, said my heart, my only wish is to become one with the Beloved.

●●●

First, he tempted me with infinite caresses.

He burnt me in the end with pain and sorrow.

In this game of chess I had to lose myself in order to win Him.

●●●

We are bound together. I am the ground You are the step.

How unfair is this Love! I can see Your world but You, I cannot.

●●●

I cannot sleep in your presence. In your absence, tears prevent me.

You watch me My Beloved on each sleepless night and only You can see the difference.

●●●

Looking at my life I see that only Love has been my soul's companion.

From deep inside my soul cries out: Do not wait, surrender for the sake of Love.

●●●

Are you searching for your soul? Then come out of your prison.

Leave the stream and join the river that flows into the ocean.

Absorbed in this world you've made it your burden.

Rise above this world. There is another vision . . .

●●●

If you can't smell the fragrance don't come into the garden of Love.

If you're unwilling to undress, don't enter into the stream of Truth.

Stay where you are. Don't come our way.

●●●

Sometimes I feel like a king, sometimes I moan in my own prison.

Swaying between these states, I can't be proud of myself.

This “I” is a figment of my imagination.

Do you want to enter paradise?

To walk the path of Truth, you need the grace of God.

We all face death in the end. But on the way, be careful never to hurt a human heart!

Do you know what the music is saying? “Come follow me and you will find the way.

Your mistakes can also lead you to the Truth. When you ask, the answer will be given.”

I am happy tonight, united with the Friend.

Free from the pain of separation, I whirl and dance with the Beloved.

I tell my heart, “Do not worry, the key to morning I've thrown away.”

Peaceful is the one who's not concerned with having more or less.

Unbound by name and fame he is free from sorrow from the world and mostly from himself.

Deafened by the voice of desire, you are unaware the Beloved lives in the core of your heart.

Stop the noise, and you will hear His voice in the silence.

Invoking Your name does not help me to see You.

I'm blinded by the light of Your face.

Longing for your lips does not bring them any closer.

What veils You from me is my memory of You.

Reason, when you speak I cannot hear the Wise One.

Even if you are as thin as a hair still there's no space for you.

In the flaming Sun all bright lights are put to shame.

●●●

This Love is a King but his banner is hidden.

Love has pierced with its arrow the heart of every lover.

Blood flows but the wound is invisible.

●●●

To be or not to be is not my dilemma. To break away from both worlds is not bravery.

To be unaware of the wonders that exist in me, that is real madness!

●●●

O Friend, You made me lovingly, put me in a dress of skin and blood.

Then planted deep inside me a seed from Your heart.

You turned the whole world into a sanctuary where You are the only One.

●●●

I'm pleased with my sight when I behold the Friend.

But my vision and the Friend cannot be two.

It is He, who sees with my eyes.

●●●

I was talking about You, You silenced me. I tasted your sweetness and everything stopped.

Bewildered, I fled to the house of my heart and there, you caught me.

●●●

Be thirsty heart, seek forever without a rest.

Let this soundless longing hidden deep inside you be the source of every word you say.

●●●

My Friend, I offer You my life. Accept me, make me drunk and save me from both worlds.

Set me on fire if my heart settles on anything but You.

●●●

There is no wine without You. No use for the rosary without Your hand.

From afar you order me to dance. But unless you set the stage and draw the curtain, my Beloved,

how can I dance?

●●●

It's good to leave each day behind, like flowing water, free of sadness.

Yesterday is gone and its tale told. Today new seeds are growing.

●●●

Lovers drink wine all day and night and tear the veils of the mind.

When drunk with love's wine body, heart and soul become one.

●●●

Be certain in the religion of Love there are no believers or unbelievers.

Love embraces all.

●●●

Walking on Your path, he who dies to himself will come to life.

You say: "Don't get drunk and lose yourself."

But tell me, how can one remain sober drinking Your wine?

●●●

Dear heart, you are so unreasonable!

First you fall in love then worry about your life.

You rob and steal then worry about the law.

You profess to be in love and still worry about what people say.

●●●

The heart is like a candle, longing to be lit.

Torn from The Beloved, it yearns to be whole again, but you have to bear the pain.

You cannot learn about love, Love appears on the wings of grace.

●●●

Last night I begged the Wise One to tell me the secret of the world.

Gently, gently he whispered,

"Be quiet, the secret cannot be spoken, it is wrapped in silence."

●●●

On my heart, in beautiful calligraphy You've written words

that only You and I can know. Their secret You promised

to reveal one day but now I see You were only teasing.

●●●

My heart is so small, it's almost invisible. How can You place such big sorrows in it? "Look," He answered, "your eyes are even smaller, yet they behold the world."

●●●

When you see the lovers don't pass them by, sit with them.

The fire of Love warms the world, but even fire dies in the company of ashes.

●●●

Walking in the garden with my lover, I was distracted by a rose.

My love scolded me, saying "How could you look at a rose with my face so close?"

●●●

From all that was familiar, I broke away.

Now I am lost, without a place, wandering.

With no music like a fool I dance and clap my hands.

How am I to live without You? You are everywhere but I can't find You.

●●●

I want a kiss from You, said my heart.

"Yes, but the price is your life."

My heart leaped with joy and said, Who cares about the price!

God knows you under any cover

He hears your unspoken words.

Everyone is tempted by the eloquence of speech,

but I am the slave of the master of silence.

With love you don't bargain

there, the choice is not yours. Love is a mirror, it reflects only your essence, if you have the courage to look in its face.

Awakened by your love, I flicker like a candle's light

trying to hold on in the dark. Yet, you spare me no blows and keep asking, "Why do you complain?"

You opened the door of my heart and filled it with the pain of love.

Shaken, I ran to seek comfort from others, but they did not respond to my lament.

Alone and desperate, I beg You, do not forsake me now.

You are so near that I cannot see You.

Like a fool I keep looking around. Your hand cannot reach me,

I'm wrapped in so many veils. My heart sobs, inconsolable . . .

Be honest dear heart, broken and abashed, how can you still chase love?

Without a drop of water how dare you enter the raging fire of love?

Tell me foolish heart, what can I do with you?

You are the cure hidden in the pain. Concealed in anger and betrayal is Your compassion and loyalty.

You are not only in heaven, I see Your footprints everywhere on earth.

●●●

The time has come to turn your heart into a temple of fire.

Your essence is gold hidden in dust. To reveal its splendor, you need to burn in the fire of love.

●●●

What pure perfection Love is, pure perfection!

What an illusion our ego is, what an illusion!

This love is a glory, what Glory!

Today is the day of union, the day of our union.

●●●

I was nothing, you made me greater than a mountain.

I lagged behind, you pushed me to the front.

My heart was shattered, you healed it. I turned into a lover of Myself.

●●●

Where have you gone my love?

You left me broken, hopeless.

I will mourn for you as long as I live.

Hope comes in hopelessness.

●●●

I want to be free from this ego dog of mine. I tie a collar of repentance around his neck, but once he sniffs the scent of blood he tears it to pieces. How can I tame this mad dog of mine?

●●●

– (Extracts from " Rumi: Whispers of the Beloved" Quatrains selected & translated by A.M. Colin & Maryam Mafi by Thorsons an imprint of Harper Collins Publishers)

ईश्वर प्राप्ति का यकीनी जरिया

1. जिक्र खफ़ी का जाप (दिल का जाप) किया करें।
2. नाजिन्स, गैर-आदमी और गैर-सोहबत के नक्शों से दिल को साफ रखें।
3. परमात्मा के सिवाय किसी की तरफ तवज्ज़ो न करें।
4. यकसुई और एकाग्रता के साथ दिल हाजिर रखने का इरादा करें।
5. सत और मालिक की तरफ उनसियत और लगाव हासिल करें।
6. अपने आप को मिटाकर उसी में महव और लय हो जाएं।
7. इसी काम में अपने को मिला दें। सबसे ज्यादा नजदीक रास्ता और असल पद पर पहुँचने का यकीनी जरिया है।

-(महात्मा रामचन्द्र जी महाराज)

Easiest & Most Certain Short-cut to Attain Eternal Bliss

1. Engage yourself in the practice of listening to every heartbeat, super imposing there with the nomenclature of the Lord (AJAPA JAP).
2. Keep your heart pure, away from the corrupting influence of undesirable things and undesirable company.
3. Always keep attuned to the Lord. Your attention should never for a moment be deviating there from.
4. Concentrate your attention on the heart and keep your heart centred in the Lord.
5. Endeavour to attain kinship and attachment to the Eternal truth, the Lord of the Universe.
6. Gradually erase the identity of self, try to merge in and attain oneness with God.
7. Sacrifice life in this grand endeavour.

(Mahatma Ramchandra Ji Maharaj)

Note: The English translation is done by Dr H.N. Saksena

राम संदेश के नियम

1. आध्यात्मिक विद्या के गुप्त और अनुभवी रहस्यों तथा सदाचार-शिक्षा को सरल भाषा में जनता तक पहुँचाना हमारी राम संदेश पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।
2. राम-सन्देश में आत्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लेख ही छपते हैं, राजनैतिक या रोमांचक लेख नहीं। रचनाओं में काट-छाँट करने अथवा छापने या न छापने की स्वतंत्रता सम्पादक को है।
3. राम संदेश का वर्ष जनवरी में आरम्भ होता है। चन्दा 20 रुपये है। एक वर्ष से कम तथा आजीवन ग्राहक नहीं बनाये जाते। चन्दा दशहरा भंडारों में या मैनेजर, राम संदेश को, एस ई 297-शास्त्री नगर, ग़ाज़ियाबाद-201002 के पते पर दिसम्बर के अंत तक अवश्य भिजवा दें।
4. राम संदेश डाक द्वारा नहीं भेजा जायेगा। इसका वितरण भंडारों पर ही किया जायेगा। कृपया अपनी प्रति लेना न भूलें।

राम संदेश

रजिस्टर्ड ऑफिस

एस ई 297-शास्त्री नगर,

ग़ाज़ियाबाद–201002

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : श्री उमा कान्त प्रसाद

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी-66, सैक्टर-6, नोएडा-201301